आधुनिक काल

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल का आरंभ उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में हुआ। लेकिन इसकी भूमिका शती के प्रारंभ से ही बनने लगी थी। 1764 में बक्सर के पास हुई लड़ाई में मीर कासिम, अवध के नवाब और दिल्ली के बादशाह की सम्मिलित सैन्य शक्ति को हराकर अंग्रेजों ने हिंदी भाषी क्षेत्र में भी राजस्व की वसूली का अधिकार प्राप्त कर लिया। इसके लिए उनकी दीवानी कचहरियाँ कायम हुईं। इससे जुड़ा एक नया नौकरी-पेशा समुदाय विकसित हुआ। 1792 में राजस्व को व्यवस्थित रूप देने के लिए लॉर्ड कार्नवालिस ने जमींदारी प्रथा लागू की। इस व्यवस्था में भूमि व्यक्तिगत संपत्ति बन गई, अब इसे बेचा-खरीदा जा सकता था। इसके पहले काश्तकार को यह अधिकार नहीं था, हालाँकि किसान पुश्त-दर-पुश्त प्राप्त जमीन पर खेती करते चले आ रहे थे। राजस्व जमा नहीं करने की स्थिति में जमींदारियाँ भी बेची-खरीदी जाने लगीं। स्वभावतः जमींदारी वैसे लोगों के हाथों में भी जाने लगी जिनकी गाँवों और किसानों की समस्याओं में कोई अभिरुचि और हमदर्दी नहीं थी। प्राकृतिक आपदाओं की मार और मालगुजारी की ऊँची दर के भार से तबाह हिंदी क्षेत्र के किसानों में असंतोष और विक्षोभ का बढ़ना स्वाभाविक था। यह आक्रोश 1857 में इस क्षेत्र के विभिन्न शासकों, जगदीशपुर (बिहार) के बाबू कुँवर सिंह, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, कानपुर के नाना साहब, तात्या टोपे, अवध की बेगम हजरत महल और अंतिम मुगल बादशाह बहादुरशाह जफर आदि के नेतृत्व में इस देश के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के रूप में प्रकट हुआ। अपने शासन क्षेत्र में ही सीमित न रहकर उन लोगों ने पूरे देश से फिरंगी हुकूमत को उखाड़ फेंकने का प्रयास किया। अतः इसका स्वरूप राष्ट्रीय था। लेकिन अंग्रेज इतिहास लेखकों ने इसे महज 'सिपाही विद्रोह' या 'गदर' के रूप में चित्रित किया।

इस राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की विफलता के बाद 1858 से यहाँ कंपनी राज (ईस्ट इंडिया कंपनी) के स्थान पर इंग्लैंड की तत्कालीन साम्राज्ञी विक्टोरिया का शासन शुरू हुआ, जिसके घोषणा पत्र

Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

में इस देश की प्रजा की बेहतरी के लिए कई वायदे किए गए । बाद में चलकर इन्हीं घोषणाओं को आधार बनाते हुए नया मध्यवर्ग अपने नागरिक अधिकारों की माँग मुखर करने लगा । लेकिन इसके पहले से ही फिरंगी हुकूमत द्वारा अपने व्यापार और प्रशासन की सुविधा के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण कदम उठाए गए थे। 1833 में लॉर्ड मेकॉले के सुझाव पर देसी लोगों के लिए भी अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली लागू की गई । इसने नए मध्यवर्ग के विकास में विशेष योगदान दिया । बाद में रेल और डाक-तार प्रणाली लागू की गई । ये प्रबंध ब्रिटिश शासन की सुविधा के लिए किए गए थे । लेकिन ये बातें अनिवार्य रूप से देशवासियों में नए युग का बोध कराने वाली साबित हुईं । यूरोप में विकसित ज्ञान-विज्ञान पर आधारित नई शिक्षा प्रणाली से देशवासियों का जुड़ाव होने लगा तथा एक नए शिक्षित वर्ग का उदय हुआ और उसमें समस्त विश्व की प्रगति के साथ कदम-से-कदम मिलाकर चलने की आकांक्षा बलवती होने लगी । फलस्वरूप, भारतीय क्षितिज पर 'नवजागरण' का अरुणोदय हुआ ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य के इस काल को 'गद्यकाल' कहा है । ऐसा इसलिए कि इस काल में खड़ी बोली गद्य में साहित्य रचना की शुरुआत हुई । इससे पूर्व का हिंदी साहित्य का इतिहास मूलतः काव्य का इतिहास है । हिंदी साहित्य के इतिहास के इस चरण में गद्य में भी साहित्य रचना शुरू हुई और शीघ्र ही इसने प्रमुख स्थान पा लिया । उन्नीसवीं शती में नई चेतना और नए ज्ञान के आगमन का श्रेय प्रेस और पत्रकारिता को दिया जाता है । हिंदी का पहला पत्र 'उदंत मार्तंड' कोलकाता से पं० जुगल किशोर के संपादन में 1826 में निकला । कोलकाता से ही 'प्रजामित्र' (1834) और 'समाचार सुधावर्षण' (1854) निकले । भारतीय नवजागरण के लिए प्रेस एक वरदान साबित हुआ । साहित्यिक दृष्टि से भी देखें तो प्रेस और समाचारपत्रों का योगदान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । भारतेंदु युग में साहित्य लेखन और पत्रकारिता में कोई स्पष्ट विभाजन रेखा नहीं खिंची थी । उस युग में साहित्यिक पत्रकारिता खूब परवान चढ़ी और गद्य साहित्य के विभिन्न रूपों–निबंध, नाटक आदि की रचना आरंभ हुई ।

1828 में राजा राममोहन राय ने 'ब्रह्मसमाज' की स्थापना की । लॉर्ड विलियम बैंटिक की सहायता से उन्होंने 1829 में सतीप्रथा को समाप्त कराया । इसके अतिरिक्त उन्होंने बहु-विवाह, जातिप्रथा, अस्पृश्यता, मूर्तिपूजा एवं अवतारवाद आदि का विरोध किया । उनके अनुयायी केशवचंद्र सेन ने 1866 में 'आदि ब्रह्मसमाज' की स्थापना की । 1867 में महादेव गोविंद रानाडे ने 'प्रार्थना समाज' की स्थापना की। एक महत्त्वपूर्ण धार्मिक-सामाजिक सुधार आंदोलन 'आर्य समाज' के नेतृत्व में चला । 1875 में इसकी स्थापना स्वामी दयानंद सरस्वती ने की थी । इनके (ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज और आर्य समाज) द्वारा चलाए गए धार्मिक-सामाजिक सुधार आंदोलन का लक्ष्य वैसी रूढ़ियों और अंधविश्वासों से भारतीय जनमानस को मुक्त कराना था जो उसकी प्रगति में बाधक थे । इस क्रम में ईश्वरचंद्र विद्यासागर के योगदान को भी भुलाया नहीं जा सकता । उन्होंने विधवा विवाह को स्वीकृत करवाने के साथ नारी शिक्षा पर जोर दिया । इससे समाज में स्त्रियों की समानता की भूमिका प्रस्तुत हुई । यों उस समय तक राजनीतिक स्वतंत्रता का विचार साफ तौर पर उभर कर सामने नहीं आ पाया था, लेकिन स्वामी दयानंद ने 'सत्यार्थ प्रकाश' में यह उद्गार व्यक्त किया था कि किसी देश में स्वदेशी शासन ही सर्वोपरि होता है ।

भारतेंदु युग से पहले खड़ी बोली में गद्य लेखन आरंभ हो चुका था । इसके आधार पर हम कह सकते हैं कि ब्रजभाषा भले ही काव्यभाषा के रूप में प्रतिष्ठित थी, हिंदी भाषी क्षेत्र में काम-काज की भाषा

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime

Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

को विकसित-स्थापित किया । एक ओर हिंदी समाज का पिछड़ापन, कुरीतियाँ, अंधविश्वास, धार्मिक पाखंड, पराधीनता, गरीबी, आर्थिक बदहाली तो दूसरी ओर 1857 का महासमर–ये सारी स्थितियाँ भारतेंदु मंडल के लेखकों के समक्ष थीं । नई चेतना का स्वीकार, समकालीन परिवेश के प्रति सजग आलोचनात्मक दृष्टि, परंपरा और जातीय स्मृति से जुड़ाव – ये वे लक्षण हैं जो भारतेंदुयुगीन रचनाकारों में सहजता से पहचाने जा सकते हैं । भारतेंदु के लिए नामवर सिंह की यह उक्ति, दरअसल भारतेंदु मंडल के सभी रचनाकारों के लिए एक समान सत्य है - "उनकी सर्जनात्मक प्रतिभा की जड़ें ठेठ अपनी ही परंपरा से फूटी हैं और जिसके हृदय के तार लोक हृदय से भी जुड़े हुए हैं । भारतेंदु का हृदय वैष्णव जरूर था, लेकिन वह किसी मंदिर का मोहन भोग न था । उस हृदय में अनीति और अन्याय के विरुद्ध दहकती आग भी थी और दुखी-दीन के लिए करुणा भी ।"

भारतेंदु युग का साहित्य लोकोन्मुख साहित्य है । हिंदी साहित्य अब भी रीतिकालीन कुहेलिका में ही था पर देश में नए विचारों का संचार हो रहा था, लोगों की अभिरुचि बदल रही थी, हिंदी साहित्य अब भी इन परिवर्तनों से अप्रभावित था । आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में "उन्होंने (भारतेंदु ने) हिंदी साहित्य को नए मार्ग पर खड़ा किया । वे साहित्य के नए युग के प्रवर्तक हुए।"

डॉ० रामविलास शर्मा ने लिखा है – "भारतेंदु युग का साहित्य जनवादी इस अर्थ में है कि वह भारतीय समाज के पुराने ढाँचे से संतुष्ट न रहकर उसमें सुधार भी करता है । वह केवल राजनीतिक स्वाधीनता का साहित्य न होकर मनुष्य की एकता, समानता और भाईचारे का भी साहित्य है ।"

इस युग में कविता के विषय बदले और खड़ी बोली गद्य का विकास हुआ । भारतेंदु के ही शब्दों में कहें तो 'हिंदी नई चाल में ढली' । नई विधाओं का जन्म हुआ । पत्र-पत्रिकाओं का विकास हुआ । ये सारी चीजें हिंदी भाषा और साहित्य के लिए बिलकुल नई थीं ।

काव्य

भारतेंदु युग में गद्य का विकास खड़ी बोली में हुआ है पर कविता की भाषा अब भी ब्रजभाषा ही थी । कविता में अभी भी रीतिकालीन प्रवृत्तियाँ–नायिका-भेद, नख-शिख वर्णन, समस्यापूर्ति, काव्य-निरूपण आदि प्रचलित थे । एक तरह से यह संक्रांति काल है क्योंकि इन पुरानी काव्य प्रवृत्तियों के साथ-साथ नए विषयों, जैसे - भूख, गरीबी, अकाल, टैक्स, महँगाई, कलह, देश आदि पर भी काव्य रचना होने लगी । यह भूमिका भारतेंदु मंडल के रचनाकारों ने निभाई । यही नहीं भारतेंदु मंडल के रचनाकारों ने परंपरागत विषयों पर भी लिखकर उनमें एक नई चमक भर दी । 'प्रेममाधुरी', 'प्रेम सरोवर', 'प्रेमतरंग' आदि कृतियों में भारतेंदु ने श्रृंगार भावना की सुंदर अभिव्यक्ति की है । इसी तरह भक्ति का स्वर भी बदला हुआ दिखाई पड़ता है । 'नीलदेवी' नाटक में भारतेंदु कहते हैं –

कहाँ करुणानिधि केशव सोए ?
जागत नाहिं अनेक जतन करि भारतवासी रोए ?

भारतेंदु युग के रचनाकारों ने अपने देश-समाज की पीड़ा को अभिव्यक्ति दी, अंग्रेजी शासन के शोषक रूप को प्रकट किया । भारतेंदु बार-बार अंग्रेजों की आर्थिक नीतियों की आलोचना करते हैं, क्योंकि आर्थिक बदहाली ही सभी समस्याओं का कारण है –

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

दीन भये बलहीन भये धन छीन भये सब बुद्धि हिरानी ।
ऐसी न चाहिए आपुके राज प्रजागन ज्यों मछरी बिन पानी ॥

भारतेंदु युग के रचनाकार बृहत्तर भारतीयता में विश्वास करते हैं जो धर्म निरपेक्ष आधारों पर टिकी है । प्रेमघन ने लिखा है -

हिंदु मुस्लिम जैन पारसी ईसाई सब जात ।
सुखी होय हिय भरे प्रेमघन सकल भारती भ्रात ॥

भारतेंदु युग में कविता की प्रतिनिधि भाषा ब्रजभाषा ही है । यों खड़ी बोली में काव्य रचना की शुरुआत हो जाती है । काव्य-रूप की दृष्टि से कवियों ने मुख्यतः मुक्तक काव्य की रचना की । राग-रागिनियों में बँधी प्राचीन पद शैली के साथ ही लोकसंगीत की शैली भी काफी लोकप्रिय रही । प्रेमघन और प्रतापनारायण मिश्र की कजलियाँ तथा भारतेंदु की लावनियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं । भारतेंदु ने 'रसा' उपनाम से गजलें भी कहीं । ये 'स्वभाषा' के प्रति सचेत थे, पर उर्दू शब्दावली के प्रयोग से उन्हें परहेज न था । इनकी भाषा में भोजपुरी, बुंदेलखंडी, अवधी आदि प्रांतीय भाषाओं के अतिरिक्त उर्दू और अंग्रेजी के भी शब्द मिलते हैं ।

भारतेंदु मंडल के रचनाकारों ने खड़ी बोली में कम लिखा । किंतु श्रीधर पाठक, बालमुकुंद गुप्त, राधाकृष्ण दास आदि ने खड़ी बोली कविता का सफल आरंभ भारतेंदु युग में ही कर दिया । इसी समय अयोध्या प्रसाद खत्री (मुजफ्फरपुर, बिहार) ने 'खड़ी बोली का आंदोलन' और 'खड़ी बोली का पद्य' जैसी कृतियों से खड़ी बोली कविता के पक्ष में अभिरुचि निर्माण में महती भूमिका निभाई । खड़ी बोली का पद्य में बिहार के ही महेश नारायण की मुक्त छंद की कविता में खड़ी बोली कविता के भावी विकास का आभास मिल जाता है ।

निबंध

भारतेंदुयुगीन गद्य का सबसे सशक्त रूप निबंधों में देखने को मिलता है । विषयों का वैविध्य, शैली का आकर्षण और कथन की भंगिमा इस युग के निबंधों की विशेषता है । स्वयं भारतेंदु को इस विधा का जनक कहना चाहिए । अन्य निबंधकारों में प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', लाला श्रीनिवासदास आदि प्रमुख हैं । ये सभी किसी-न-किसी पत्र-पत्रिका से जुड़े थे ।

निबंध एक ऐसी विधा है जिससे लेखक के व्यक्तित्व की पहचान हो जाती है । भारतेंदु ने पुरातत्त्व, इतिहास, धर्म, कला, समाज-सुधार, भाषा आदि विषयों पर निबंध लिखे । भारतेंदु ने अपने निबंधों को सजीव बनाकर रखा है । उनमें व्यंग्य शैली का अद्भुत आकर्षण है । इसी तरह प्रतापनारायण मिश्र ने 'धोखा', 'मनोयोग', 'समझदार की मौत है', 'नाक', 'जीभ', 'दाँत' आदि निबंध लिखे । आचार्य शुक्ल ने इन्हें हिंदी का एडीसन और बालकृष्ण भट्ट को स्टील कहा है । बालकृष्ण भट्ट इस काल के सबसे समर्थ निबंधकार हैं । इन्होंने सामाजिक समस्याओं पर खूब लिखा । इसके साथ ही इनके व्यक्तिपरक निबंध भी प्रसिद्ध हैं । इनके निबंधों में 'बालविवाह', 'अंग्रेजी शिक्षा और प्रकाश', 'चली सो चली', 'बातचीत', 'चबूती उमर' आदि प्रमुख हैं ।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

भारतेंदु युग के निबंधों की सबसे बड़ी विशेषता उन निबंधों से प्रकट होने वाला व्यापक राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जागरण की चेतना है ।

नाटक

हिंदी नाटक का आरंभ भारतेंदु युग से मानना चाहिए । मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों की इस काल में धूम रही । इस युग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार भारतेंदु हरिश्चंद्र हैं । नाटकों का प्रत्यक्ष जुड़ाव लोक-समाज से होता है । इस तरह युगीन यथार्थ की स्वीकृति और नाटक की प्रकृति के अनुरूप उस काल के नाटकों में वर्तमान दशा पर तीखा व्यंग्य और सामाजिक व्यवस्था की कलई खोलने का स्पष्ट साहस भी दिखाई पड़ता है । 'अंधेर नगरी' और 'भारत दुर्दशा' उनके सर्वाधिक चर्चित नाटक हैं । 'अंधेर नगरी' में वे व्यंग्य को राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक तीनों स्तरों पर उभारते हैं । 'अंधेर नगरी' का यह व्यंग्य द्रष्टव्य है –

चूरन अमले सब जो खावैं । दूनी रुशवत तुरत पचावैं ।
चूरन साहब लोग जो खाता । सारा हिंद हजम कर जाता ।
चूरन पुलिसवाले खाते । सब कानून हजम कर जाते ।

इसके व्यंग्य की प्रासंगिकता आज भी वर्तमान है । लाला श्रीनिवासदास ने 'रणधीर प्रेममोहिनी', 'संयोगिता स्वंयवर' आदि नाटक लिखे । राधाकृष्ण दास का 'महाराणा प्रताप' भी उस काल का प्रमुख नाटक रहा है । राधाचरण गोस्वामी ने 'तन-मन गोसाई जी को अर्पण', 'बूढ़े मुँह मुँहासे' तथा 'अमर सिंह राठौर'; गोपालराम गहमरी ने 'देशदशा', 'जैसे को तैसा' आदि व्यंग्यात्मक नाटक लिखे ।

भारतेंदु युग में ऐतिहासिक, पौराणिक, रोमानी और सामाजिक विषयों पर नाटक लिखे गए । प्रहसनों के द्वारा तीखे व्यंग्य किए गए । इन नाटकों ने स्वस्थ मनोरंजन के साथ ही सामाजिक चेतना के निर्माण एवं नई हिंदी को लोकप्रिय बनाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

उपन्यास

भारतेंदु युग में उपन्यास रचना का आरंभ अंग्रेजी और बँग्ला के प्रभाव के साथ नए मध्य वर्ग के उदय से जुड़ा है । इस युग के उपन्यासकारों में लाला श्रीनिवास दास, किशोरीलाल गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, ठाकुर जगन्मोहन सिंह, देवकीनंदन खत्री, गोपालराम गहमरी आदि उल्लेखनीय हैं ।

आचार्य शुक्ल ने लाला श्रीनिवास दास के 'परीक्षा गुरु' (1882) को हिंदी का पहला मौलिक उपन्यास माना है । यह एक सामाजिक उपन्यास है और इसमें नवजागरण की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है । इस युग के सामाजिक उपन्यासों में श्रद्धाराम फुल्लौरी का 'भाग्यवती', बालकृष्ण भट्ट का 'रहस्यकथा', 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान एक सुजान', राधाकृष्ण दास का 'निःसहाय हिंदू', अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' का 'ठेठ हिंदी का ठाठ' आदि उल्लेखनीय हैं । ये उपन्यास उद्देश्यपरक हैं ।

सामाजिक कुरीतियों का विरोध एवं आदर्श समाज की रचना करना इनका लक्ष्य है । इनकी कथा-संरचना में कसावट नहीं है पर हिंदी उपन्यास के विकास में इनका स्थाई महत्त्व है ।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

इस काल में सर्वाधिक ख्याति देवकीनंदन खत्री के उपन्यासों को प्राप्त हुई । इनके उपन्यासों में तिलिस्म, ऐयारी, रहस्य-रोमांच भरा है । 'चंद्रकांता', 'चंद्रकांता संतति', 'नरेंद्र मोहिनी' आदि इनके उपन्यास हैं । कहते हैं 'चंद्रकांता' को ऐसी प्रसिद्धि मिली कि इसे पढ़ने के लिए अनेक लोगों ने हिंदी सीखी । इसी काल में हिंदी में जासूसी उपन्यास भी लिखे गए । गोपाल राम गहमरी कृत 'अद्‌भुत लाश', 'गुप्तचर' आदि इनमें उल्लेखनीय हैं । इस काल के रोमानी उपन्यासों में ठाकुर जगन्मोहन सिंह का 'श्यामा स्वप्न' विशेष उल्लेखनीय है । इस काल में अंग्रेजी, बाँग्ला और मराठी उपन्यासों के अनुवाद भी हुए ।

कहानी

भारतेंदु युग में कहानी लेखन का कोई विश्वसनीय और सुरुचिपूर्ण ढाँचा नहीं दिखाई पड़ता । जो प्रयास हैं वे प्रायः इतिहास-पुराण कथित शिक्षा, नीति या हास्य प्रधान कथाओं के क्षेत्र के ही हैं । भारतेंदु की रचना 'एक अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न', 'स्वर्ग में विचार सभा' आदि को कहानी का पूर्व रूप कहा जा सकता है । हिंदी में कहानी लेखन की विधिवत शुरुआत 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन के बाद द्विवेदी युग में ही होती है ।

आलोचना

हिंदी आलोचना का आरंभिक रूप भारतेंदुयुगीन पत्र-पत्रिकाओं में दिखता है । पत्र-पत्रिकाओं में पुस्तकों की समीक्षाएँ प्राय: प्रकाशित होती थीं । इसके अतिरिक्त रीतिकालीन लक्षण ग्रंथों की परंपरा में सैद्धांतिक आलोचना, टीकाएँ और इतिहास ग्रंथों में कवि परिचय के रूप में लिखी आलोचनाएँ मिलती हैं । इस काल में 'हिंदी प्रदीप' ही एक ऐसा पत्र था जिसमें अपेक्षाकृत गंभीर आलोचनाएँ प्रकाशित होती थीं ।

विद्वानों ने भारतेंदु के 'नाटक' नामक निबंध से हिंदी आलोचना की विधिवत शुरुआत मानी है । पुस्तक समीक्षकों में उल्लेखनीय नाम बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' का है । इन्होंने श्रीनिवासदास कृत 'संयोगिता स्वयंवर' की विस्तृत समीक्षा अपनी पत्रिका 'आनंद कादंबिनी' में की । बालकृष्ण भट्ट ने भी इसकी समीक्षा अपने पत्र 'हिंदी प्रदीप' में की थी । बालकृष्ण भट्ट को हिंदी में आधुनिक आलोचना के प्रवर्तन का श्रेय प्राप्त है । सैद्धांतिक और व्यावहारिक आलोचना का प्रवर्तन उनके कतिपय निबंधों और समीक्षाओं द्वारा होता है ।

अन्य विधाएँ

भारतेंदु ने विक्रमादित्य, कालिदास, रामानुज, जयदेव, सूरदास, मुगल बादशाहों, लॉर्डमेयो आदि व्यक्तियों की जीवनियाँ लिखकर हिंदी में जीवनी साहित्य का आरंभ किया । इनके अतिरिक्त देवीप्रसाद मुंसिफ, कार्तिक प्रसाद खत्री, काशीनाथ खत्री, राधाकृष्ण दास आदि ने भी जीवनियाँ लिखीं । ये प्रौढ़ जीवनी साहित्य के उदाहरण नहीं हैं, पर आरंभ का श्रेय तो इन्हें प्राप्त है ही ।

इसके अतिरिक्त इस काल में यात्रा साहित्य और ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न विषयों पर भी लेखन प्रारंभ हो गया ।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime

Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

हिंदी की कुछ आरंभिक पत्र-पत्रिकाएँ

1.	उदंत मार्तंड (साप्ताहिक)	1826	कलकत्ता
2.	बंगदूत (साप्ताहिक)	1829	कलकत्ता
3.	प्रजामित्र (साप्ताहिक)	1834	कलकत्ता
4.	बनारस अखबार	1845	बनारस
5.	मार्तंड (साप्ताहिक)	1846	बनारस
6.	मालवा अखबार (साप्ताहिक)	1849	मालवा
7.	सुधाकर	1850	काशी
8.	बुद्धि प्रकाश (साप्ताहिक)	1852	आगरा
9.	समाचार सुधावर्षण (दैनिक)	1854	कलकत्ता
10.	प्रजाहितैषी	1855	आगरा
11.	ज्ञानदायिनी पत्रिका (मासिक)	1866	लाहौर
12.	तत्त्वबोधिनी पत्रिका	1865	बरेली
13.	कविवचन सुधा	1868	काशी
14.	जगत समाचार (साप्ताहिक)	1869	आगरा
15.	बिहार बंधु (मासिक)	1871	बांकीपुर (पटना)
16.	हरिश्चंद्र मैगजीन (मासिक)	1873	बनारस
17.	बाल बोधिनी (मासिक)	1874	बनारस
18.	भारत बंधु (साप्ताहिक)	1874	बनारस
19.	हिंदी प्रदीप (मासिक)	1877	इलाहाबाद
20.	सार सुधानिधि (साप्ताहिक)	1879	कलकत्ता

भारतेंदु युग के हिंदी गद्य लेखन का महत्त्व हम इस रूप में समझ सकते हैं कि इस काल में भाषा का सामान्य स्वरूप स्थिर हुआ, इसका परिमार्जन हुआ, इसमें सशक्तता एवं प्रौढ़ता आई, साथ ही शैली-वैशिष्ट्य की दृष्टि से पर्याप्त वैविध्य का समावेश हुआ। निबंध और नाटक इन दो विधाओं का इस काल में विशेष विकास हुआ।

भारतेंदु युग के प्रमुख रचनाकार

भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885)

इनका जन्म बनारस में हुआ था। ये आधुनिक हिंदी साहित्य के अग्रदूत कहे जाते हैं। साहित्य की कई विधाओं को इन्होंने समृद्ध किया। बहुमुखी प्रतिभा के धनी भारतेंदु एक संवेदनशील, परदुखकातर और कोमल हृदय के व्यक्ति थे। अपनी भाषा और देश के प्रति इनमें अपूर्व लगाव था।

भारत के अतीत के प्रति इनमें श्रद्धा थी। अपनी जड़ों से गहरा जुड़ाव था। ज्ञान-विज्ञान की आधुनिक उपलब्धियों से ये अनजान न थे, और न ही इस अज्ञानता को अच्छा मानते थे। भारतेंदु एक

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

कर्मशील, आधुनिक और वैज्ञानिक भारत का सपना देखते थे । अपने प्रसिद्ध 'बलिया व्याख्यान' में इन्होंने देशवासियों के आलसीपन की तीखी आलोचना की है–''इस अभागे आलसी देश में जो कुछ हो जाए वही बहुत कुछ है । ....यह समय ऐसा है कि जो पीछे रह जाएगा फिर कोई उपाय किए भी आगे न बढ़ सकेगा ।'' देश की आर्थिक बदहाली और बढ़ती जनसंख्या को देख उन्होंने कहा – ''तो अब बिना ऐसा उपाय किए काम नहीं चलेगा कि रुपया भी बढ़े, और वह रुपया बिना बुद्धि बढ़े न बढ़ेगा । भाइयो, राजा-महाराजाओं का मुँह मत देखो, मत यह आशा रखो कि पंडितजी कथा में कोई ऐसा उपाय भी बतला देंगे कि देश का रुपया और बुद्धि बढ़े । तुम आप ही कमर कसो, आलस छोड़ो । कब तक अपने को जंगली, हूस, मूर्ख, बोदे, डरपोकने पुकरवाओगे । दौड़ो इस घोड़ दौड़ में, जो पीछे पड़े तो फिर कहीं ठिकाना नहीं है ।'' तमाम तरह के भेदों को भूलकर उनकी अपील है कि ''ऐसा करो जिससे तुम्हारा रुपया तुम्हारे ही देश में रहे ।'' और इसके लिए ''परदेशी वस्तु और परदेशी भाषा का भरोसा मत रखो । अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो ।''

भारतेंदु संक्रमण काल के कवि हैं । उन्होंने भक्ति और शृंगार के भी पद लिखे, पर उनका महत्त्व आधुनिक बोध की रचनाओं के कारण है । इन रचनाओं में राजभक्ति, देशभक्ति, भाषोन्नति तथा सुधार संबंधी विचार हैं । इनमें नवजागरण की चेतना की अभिव्यक्ति हुई है । इनकी प्रमुख काव्य रचनाओं में 'प्रेममाधुरी', 'प्रेम मालिका', 'फूलों का गुच्छा' 'प्रेम फुलवारी' आदि हैं । उर्दू में इन्होंने 'रसा' नाम से गजलें कहीं । 'सुंदरी तिलक' और 'पावस कवित्त संग्रह' भी इनके ग्रंथ हैं ।

भारतेंदु ने भारतवासियों के फूट, वैमनस्य, पिछड़ेपन और रूढ़ियों पर प्रहार किए । यह सही है कि भारतेंदु ने अंग्रेजी राज की प्रगतिगामी प्रवृत्तियों को देख उसकी प्रशंसा की पर उसकी अनीतियों की खुल कर आलोचना भी की ।

गद्य में भारतेंदु का मुख्य ध्यान नाटकों की ओर था । इनके अनूदित और मौलिक नाटकों में 'विद्यासुंदर', 'रत्नावली', 'मुद्राराक्षस', 'सत्य हरिश्चंद्र', 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी' आदि प्रमुख हैं ।

'बादशाह दर्पण' और 'काश्मीर कुसुम' इनके इतिहास ग्रंथ हैं । 1868 में इन्होंने कविवचन सुधा, 1873 में 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' (1874 में यही 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' हो गया), 1874 में स्त्रियों के शिक्षार्थ 'बाला-बोधिनी' नामक पत्र प्रकाशित किए ।

बालकृष्ण भट्ट (1844-1914)

हिंदी साहित्य में इनकी ख्याति एक निबंधकार और पत्रकार की रही है । 'हिंदी प्रदीप' इनका पत्र था । इन्होंने लेखन के अतिरिक्त अपने साहित्यिक व्यक्तित्व से अपने युग के रचनाकारों को प्रेरित और प्रभावित किया । विपरीत परिस्थितियों में भी इन्होंने 33 वर्षों तक 'हिंदी प्रदीप' का संपादन किया । इस पत्र के माध्यम से इन्होंने सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना को उद्‌बुद्ध तो किया ही, हिंदी के प्रचार-प्रसार में अमूल्य योग दिया और राष्ट्रीय चेतना को बलवती बनाया ।

बालकृष्ण भट्ट ने 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान एक सुजान' उपन्यास और 'पद्मावती', 'चंद्रसेन', 'शिशुपाल वध', 'नल दमयंती' आदि नाटक लिखे ।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

इनके निबंधों में प्रखर आक्रोश के साथ पर्याप्त-लालित्य भी है। इनकी भाषा मुहावरेदार, सरल एवं व्यंग्य से भरी हुई है। डॉ० रामविलास शर्मा ने बालकृष्ण भट्ट को हिंदी आलोचना के जन्मदाता के रूप में याद किया है। हिंदी के लिए व्यक्तिगत रूप से इनसे अधिक त्याग करने वाला साहित्यकार हमें अपने संपूर्ण इतिहास में कठिनाई से मिलेगा।

बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' (1855-1922)

प्रेमघन ने ब्रजभाषा में कवित्त-सवैया लिखने वाली परंपरागत पद्धति का अनुसरण किया। इसके अतिरिक्त कजली, होली, लावनी आदि शैलियों का भी प्रयोग इन्होंने किया। इन्होंने ब्रजभाषा के साथ ही खड़ी बोली में भी काव्य रचना करने की सफल चेष्टा की।

आचार्य शुक्ल ने 'प्रेमघन' को विलक्षण शैली के गद्य लेखक के रूप में स्मरण किया है। 'वारांगना रहस्य', 'भारत सौभाग्य' आदि इनकी नाट्य कृतियाँ हैं। इन्होंने 'आनंद कादंबिनी' नामक पत्र का प्रकाशन किया।

प्रतापनारायण मिश्र (1856-1895)

मनमौजी और विनोदी स्वभाव के प्रतापनारायण मिश्र हिंदी के आजीवन सेवक रहे। भारतेंदु के व्यक्तित्व से अत्यंत प्रभावित और उन्हें अपना गुरु माननेवाले मिश्र जी ने कानपुर से 'ब्राह्मण' पत्र का प्रकाशन किया। कविता के क्षेत्र में ये मुख्यतः पुरानी धारा के अनुवर्ती थे पर इन्होंने समसामयिक समस्याओं पर भी कविता करनी शुरू कर दी थी। अंग्रेजी राज के प्रजाहितैषी रूप पर व्यंग्य करते हुए इन्होंने कहा –

'जिन धन धरती हरी सो करिहैं कौन भलाई,
बंदर काके मीत कलंदर केहि के भाई।

कविताओं के लिए इन्होंने आल्हा, लावनी जैसी शैलियों का प्रयोग किया। इन्होंने 'कलिकौतुक रूपक', 'हठी हम्मीर', 'कलिप्रसाद' आदि नाटक लिखे।

प्रतापनारायण मिश्र का मुख्य योगदान इनके पत्र 'ब्राह्मण' और निबंधों के कारण है। प्रतापनारायण मिश्र की राजनीतिक चेतना अत्यंत उर्वर थी। गंभीर विषयों पर लिखते हुए इनकी भाषा सधी, प्रांजल और सुस्पष्ट है, व्यक्ति-व्यंजक निबंधों में उसका एक बिलकुल नया रूप दिखाई पड़ता है, वह तब आत्मीय, मुहावरों-कहावतों से भरी हुई, मस्ती और भोलेपन से सराबोर हो जाती है। 'प्रेम पुष्पादन', 'मन की लहर', 'दंगल खंड', 'लोकोक्तिशतक' आदि इनकी रचनाएँ हैं।

निश्चय ही हिंदी का प्रचार-प्रसार कोई सहज-सरल कार्य न था। राजा शिवप्रसाद सितारेहिंद, भारतेंदु हरिश्चंद्र, फ्रेडरिक पिंकॉट, ठाकुर लक्ष्मण प्रसाद सिंह प्रभृति कई मनीषियों का इस महान कार्य में योगदान रहा। हिंदी भाषा और नागरी अक्षरों की उपयोगिता को लेकर भारतेंदु ने कई नगरों में व्याख्यान दिए। सरकारी दफ्तरों में नागरी के प्रवेश के लिए भी उन्होंने अथक परिश्रम किए। इस दिशा में 1893 में 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना एक उल्लेखनीय घटना है। श्यामसुंदर दास, पं० रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमार सिंह का इसमें प्रमुख योगदान रहा। इस सभा के दो उद्देश्य थे – नागरी अक्षरों का प्रचार और हिंदी साहित्य की समृद्धि।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

नागरी के प्रचारकों में पंडित गौरीदत्त भी उल्लेखनीय हैं । नागरी के प्रचार का सीधा संबंध शिक्षा के प्रसार, साहित्य के निर्माण और प्रकाशन के विकास आदि से जुड़ा था । प्रतापनारायण सिंह, रामप्रसाद सिंह, बलवंत सिंह, सुंदरलाल और पंडित मदनमोहन मालवीय जैसे प्रतिष्ठित व्यक्तियों का प्रतिनिधि मंडल अंग्रेज अधिकारियों से मिला और इनके सतत परिश्रम से ही सन् 1900 में नागरी लिपि को कचहरियों में प्रवेश की अनुमति मिली ।

इसी युग में भारतेंदु के मित्र पटना निवासी ठाकुर रामदीन सिंह ने पटना में स्थित अपने 'खड्गविलास प्रेस' के द्वारा भारतेंदु जी की अनेक कृतियाँ सस्ते दामों में लोकोपयोगी संस्करणों के रूप में प्रकाशित कीं । इस प्रेस ने बिहार के अनेक लेखकों का साहित्य भी उस युग में प्रकाशित किया । यह प्रकाशन संस्था वस्तुतः आधुनिक साहित्य और हिंदी गद्य के प्रोत्साहन, प्रचार-प्रसार आदि के लिए ऐतिहासिक महत्त्व की रही है । इस संस्था ने सामान्य रूप से हिंदी क्षेत्र और विशेष रूप से बिहार में साहित्यिक-सांस्कृतिक नवजागरण के चेतना-विस्तार में महती भूमिका निभाई ।

द्विवेदी युग

(1900-1918)

जिस स्वातंत्र्य चेतना, आधुनिकता, जनपक्षधरता, समता, अस्तित्व बोध और वैज्ञानिकता को भारतेंदु युग ने हिंदी साहित्य में स्थान दिया था, उसका सर्वतोन्मुखी विकास द्विवेदी युग में दिखाई पड़ता है । बीसवीं शताब्दी के इन प्रथम दो दशकों में हिंदी साहित्य में भारतेंदुयुगीन संक्रमणशील स्थितियाँ और उससे जुड़े अवलक्षण विदा ले लेते हैं । निश्चित रूप से द्विवेदी युग भारतेंदु युग का विकास है पर इसकी मौलिकता और निजी उपलब्धियों के पर्याप्त प्रमाण भी हैं । मसलन, इस काल में साहित्य रचना अब केवल मनोरंजन-कर्म नहीं रहा, इसका प्रत्यक्ष संबंध रचनाकार की सामाजिक-राजनीतिक-वैयक्तिक इयत्ता से माना जाने लगा । एक बड़ा परिवर्तन इस काल में कविता की भाषा को लेकर हुआ । कविता की भाषा अब ब्रज से खड़ी बोली हो गई । इस काल को नवजागरण से उचित ही जोड़ा जाता है । भारत के अतीत के गौरवशाली अध्यायों का पुनर्पाठ इस युग की प्रमुख साहित्यिक पहचान और उपलब्धि है ।

द्विवेदी युगीन साहित्यिक परिदृश्य का अविभाज्य संबंध तत्कालीन राजनीतिक-सामाजिक परिदृश्य से है । भारत की स्वतंत्रता के इतिहास में यह काल कई-कई तीव्र परिवर्तनों और स्वाधीनता की प्रत्यक्ष और मुखर माँग का काल है । 1885 में काँग्रेस की स्थापना हो चुकी थी और उसकी लोकप्रियता धीरे-धीरे बढ़ रही थी । वह अपने उद्देश्यों को लेकर भी बहुत स्पष्ट हो चुकी थी । इसी बीच 1905 में बंगाल के विभाजन ने स्वदेशी आंदोलन को जन्म दिया । स्वतंत्रता की लड़ाई में इसका स्थाई और ऐतिहासिक महत्त्व है । 1906 में काँग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में दादाभाई नौरोजी ने पहली बार स्वराज्य की माँग की । धीरे-धीरे काँग्रेस के अंदर ही वैचारिक मतभेद गहराने लगे और 1907 में सूरत अधिवेशन में काँग्रेस का

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

विभाजन हो गया और गरमपंथी इससे अलग हो गए । भारत में उग्र राष्ट्रवाद के उदय में बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय और विपिनचंद्र पाल का महत्त्वपूर्ण योगदान है । तिलक ने नारा दिया – "स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा ।" स्मरण रहे कि महान कथाकार प्रेमचंद के आरंभिक लेखन का तिलक की विचारधारा से स्पष्ट जुड़ाव है । प्रेमचंद की पहली पुस्तक 'सोजे वतन' 1908 में प्रकाशित हुई थी जिसमें बगावत की गंध पाकर अंग्रेजों ने उसे जब्त कर लिया था ।

अंतरराष्ट्रीय पटल पर भी यह काल कई परिवर्तनों का है । जापान जैसे छोटे देश ने 1905 में रूस को पराजित कर दिया । इससे पहले इथोपिया से इटली की हार का भी असर भारत के बौद्धिकों और राजनीतिक कार्यकर्ताओं पर पड़ा था । गाँधीजी के दक्षिण अफ्रीका में संघर्ष की कहानियाँ भी यहाँ पहुँच रही थीं । संक्षेप में कहें तो भारतीयों ने निर्भय मन और विद्रोही मस्तिष्क की उपलब्धि कर ली थी । यह स्वातंत्र्य चेतना इस काल के लिए केंद्रीय थीम है और इस काल के साहित्य की सामाजिक-सांस्कृतिक चेतना का इससे प्रत्यक्ष जुड़ाव है ।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर इस काल को 'द्विवेदी युग' कहा जाता है । 1903 में आचार्य द्विवेदी 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक बने । सरस्वती का प्रकाशन 1900 की जनवरी से शुरू हुआ था : पहले वर्ष में इसके संपादक थे – श्यामसुंदर दास, कार्तिक प्रसाद खत्री, राधाकृष्ण दास, जगन्नाथ दास रत्नाकर और किशोरीलाल गोस्वामी । 1901 में केवल श्याम सुंदर दास इसके संपादक रह गए । जनवरी 1903 से 1920 तक बीच के दो वर्षों को छोड़कर इसका संपादन आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने किया ।

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' के माध्यम से एक आंदोलन खड़ा कर दिया । उनकी चिंता का मुख्य केंद्र था – रीतिवाद का विरोध और भाषा का अनुशासन । द्विवेदी जी ने सरस्वती में प्रकाशित रचनाओं की न केवल भाषा सुधारी बल्कि उसके विषयों, भावों और विचारों को भी मर्यादा प्रदान की । द्विवेदी जी ने तत्कालीन रचनाकारों को साहित्य रचना के अनेक विषय सुझाए। 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' शीर्षक उनका निबंध इसी कोटि का है। द्विवेदी जी का स्पष्ट मत था कि गद्य और पद्य के लिए अलग-अलग भाषाओं का प्रयोग उचित नहीं है । भाषा में व्याकरण दोष, अश्लील और ग्राम्य शब्दों के प्रयोग, शब्दाडंबर आदि पर उनकी सचेत दृष्टि थी ।

'सरस्वती' में समसामयिकता का स्पष्ट आग्रह था । द्विवेदी जी ने तत्कालीन समस्याओं और युगीन आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपने युग का साहित्य-संस्कार निर्मित किया ।

द्विवेदी जी ने सरस्वती में प्रकाशन की कसौटी 'रचना' को ही माना । स्मरणीय है कि सितंबर 1914 में सरस्वती में ही पटना के हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' प्रकाशित हुई थी । यह भोजपुरी में है और संभवतः हिंदी की पहली दलित कविता है । हिंदी में 'सरस्वती' पत्रिका के महत्त्व के संबंध में डॉ० रामविलास शर्मा का यह मत पूर्णतः उचित है कि "सरस्वती सबसे पहले ज्ञान की पत्रिका थी, और हिंदी भाषी जनता की सामान्य जातीय पत्रिका थी, ऐसे साहित्य की, जो रीतिवादी रूढ़ियों का नाश करके नवीन सामाजिक-सांस्कृतिक आवश्यकताओं के अनुरूप रचा जा रहा था । इसलिए उसने हिंदी साहित्य में, और उसके बाहर व्यापक स्तर पर भारतीय साहित्य में वह प्रतिष्ठा प्राप्त की जो बीसवीं सदी

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

में अन्य किसी पत्रिका को प्राप्त न हुई ।"

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती के माध्यम से साहित्यकारों को रूढ़िमुक्त लिखने की प्रेरणा दी और विचारोत्तेजक लेखन के लिए एक दृढ़ाधार प्रदान किया । 'सरस्वती' के माध्यम से कई लेखक सामने आए जिनमें मैथिलीशरण गुप्त, राय देवी प्रसाद पूर्ण, लक्ष्मीधर वाजपेयी, ठाकुर गदाधर सिंह, सियारामशरण गुप्त आदि प्रमुख हैं ।

काव्य

द्विवेदी युग से पूर्व कविता का जो संस्कार था, वह भक्ति विषयक, शृंगारपरक, समस्यापूर्ति या देशभक्ति का था; कविता की भाषा ब्रजभाषा थी और काव्य रसिकों को खड़ी बोली का रास्ता पसंद न था। खड़ी बोली उन्हें कविता के लिए उपयुक्त नहीं जान पड़ती थी । यद्यपि खड़ी बोली में कविता लेखन की शुरुआत भारतेंदु युग में ही हो चुकी थी, ऐसे में द्विवेदी जी ने बल देकर गद्य और पद्य की भाषा के एक होने की आवश्यकता जताई; विविध विषयों, विभिन्न काव्य रूपों को अपनाने का प्रोत्साहन दिया । द्विवेदी जी से प्रेरणा लेकर चलनेवालों में मैथिलीशरण गुप्त, गोपालशरण सिंह, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', लोचन प्रसाद पांडेय उल्लेखनीय हैं । युग की माँग समझकर अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', नाथूराम शर्मा 'शंकर', राय देवी प्रसाद पूर्ण आदि नए विषयों की ओर मुड़े । इन सबके प्रयत्नों से खड़ी बोली ने इस काल में मुख्य काव्यभाषा का स्थान पा लिया । अब काव्य व्याकरण की दृष्टि से अधिक मर्यादित, वर्तनी की दृष्टि से अधिक परिमार्जित, छंदों की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण तथा विषय की दृष्टि से अनेकमुखी हो गया ।

प्रमुख प्रवृत्तियाँ

आचार्य द्विवेदी ने 'कवि-कर्त्तव्य' शीर्षक निबंध में लिखा है – "चींटी से लेकर हाथीपर्यंत पशु, भिक्षुक से लेकर राजापर्यंत मनुष्य, बूंद से लेकर समुद्रपर्यंत जल, अनंत आकाश, अनंत पृथ्वी, अनंत पर्वत–सभी पर कविता हो सकती है ।" यह एक महत्त्वपूर्ण उद्घोषणा थी । कविता के इस असीम संसार में द्विवेदी युग में जो मूल प्रवृत्ति उभरी, वह राष्ट्रीयता की थी । भारतेंदु युग से इस काल के काव्य का अंतर यह है कि 'कहाँ करुणानिधि केसव सोए' से आगे यह देवत्व या पारलौकिक सत्ता के स्मरण का हेतु नहीं, बल्कि दुखी, दरिद्र, दलित और पराधीन भारतवंशियों को स्वयं ही सोचने-विचारने और स्वभावतः आगे की यात्रा के लिए ठोस मार्ग दिखाता है –

> हम कौन थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी
> आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी ।

द्विवेदी युग में प्रकृति भी स्वतंत्र रूप से काव्य का विषय बनी । प्रायः सभी प्रमुख कवियों ने अपनी रचनाओं में प्रकृति चित्रण किया । यह चित्रण नायक-नायिका के संबंध में किए गए रीतिकालीन ऋतुवर्णन आदि के समान निर्जीव एवं परंपरा-पालन मात्र नहीं है, इसमें पर्याप्त नवीनता एवं ताजगी है । पंचवटी का यह प्रसंग देखें –

> चारु चंद्र की चंचल किरणें
> खेल रही थीं जल-थल में

Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई थी
अवनि और अंबर तल में

द्विवेदीयुगीन काव्य का एक प्रमुख विषय नारी चेतना और नारी-स्वातंत्र्य की अभिव्यक्ति है। 'यशोधरा' में गुप्त जी कहते हैं – 'गोपा बिना गौतम भी ग्राह्य नहीं मुझको।' 'यशोधरा' में ही गुप्त जी कहते हैं –

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी।

'साकेत' की उर्मिला, 'प्रियप्रवास' की राधा नई स्त्रीछवियाँ हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य में स्त्री-विषयों को उपस्थित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

द्विवेदी युग के रचनाकारों ने प्राचीन पौराणिक पात्रों जैसे – राम, कृष्ण, सीता, राधा को नवीन एवं समकालीन मानवीय संस्पर्श देते हुए उन्हें 'आधुनिक' स्वरूप प्रदान किया। इसके पीछे उनका लक्ष्य अपने युग के भारत के लिए एक आदर्श एवं प्रेरणा स्रोत का निर्माण करना था।

द्विवेदीयुगीन कविता का प्रमुख अभिलक्षण इसकी इतिवृत्तात्मकता है। यह स्मरण रहना चाहिए कि द्विवेदीयुगीन रचनाकार इसे काव्योचित स्वरूप प्रदान कर रहे थे। ब्रजभाषा का माधुर्य भी इनके समक्ष चुनौती थी, ऐसे में द्विवेदी युग की काव्यभाषा को अत्यंत सपाट, कृत्रिम और सायास नहीं मानना चाहिए। रामविलास शर्मा ने कहा है, "असल में ऐसा मानना एकपक्षीय है। इससे पहले पद्य की भाषा ब्रज थी। भारतेंदु जी ने पद्य के क्षेत्र में आधिपत्य को तोड़ने का कुछ प्रयास किया था। लेकिन उसकी जड़ काटी गुप्त जी ने ही। सही मायने में गुप्त जी ने ही पद्य में खड़ी बोली की बुनियाद रखी, जिसे निराला और पंत आदि ने विकसित किया। इस दृष्टि से सिर्फ सनेही जी ही गुप्त जी के मुकाबले में थे। उनकी कविताएँ सामान्य आदमी की भी समझ में आती हैं और इसीलिए वे इतने लोकप्रिय भी हुए।"

इस काल में नए भाव-बोध का एक प्रमुख लक्षण 'स्वच्छंदता' की प्रवृत्ति भी है। इसका पूर्ण परिष्कृत रूप 'छायावाद' में मिलता है। द्विवेदीयुगीन स्वच्छंद कवियों में गतानुगतिकता से मुक्ति, प्रकृति चित्रण में पर्याप्त कल्पनाशीलता, शैलीगत चमत्कार, मानवीकरण आदि के चिह्न दिखाई पड़ते हैं। इन कवियों में श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, मुकुटधर पांडेय आदि उल्लेखनीय हैं।

द्विवेदी युग में खड़ी बोली काव्य के अनंतर ब्रजभाषा काव्य की भी रचना हुई। द्विवेदीयुगीन ब्रजभाषा काव्य प्रायः परिपाटीबद्ध है। जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' और सत्यनारायण 'कविरत्न' समय के प्रवाह से लगभग निरपेक्ष रहकर ब्रजभाषा में लिखते रहे। 'उद्धवशतक', 'हरिश्चंद्र', 'कल-काशी', 'गंगावतरण' आदि रत्नाकर जी की रचनाएँ हैं। सत्यनारायण कविरत्न भी पूर्णतः ब्रजभाषा के ही कवि थे। उन्होंने अपनी कविताओं को देश की राष्ट्रीय समस्याओं, ग्रामीण जीवन से भी जोड़ा। 'हृदय-तरंग' इनका संग्रह है। कविरत्न की विशेषता उनके काव्य में मौजूद रसार्द्रता है।

द्विवेदी युग के प्रमुख कवि

मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964)

गुप्तजी का जन्म उत्तर प्रदेश के चिरगाँव (झाँसी) में हुआ था। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

स्नेह और प्रोत्साहन इन्हें निरंतर मिलता रहा । इनकी प्रथम पुस्तक 'रंग में भंग' का प्रकाशन 1910 में हुआ । 'जयद्रथ वध' का भी प्रकाशन इसी वर्ष हुआ । 1912 में 'भारत-भारती' प्रकाशित हुई । 'भारत-भारती' का हिंदी की राष्ट्रीय कविता और स्वतंत्रता संग्राम में अप्रतिम स्थान है । इसी ने इन्हें 'राष्ट्रकवि' की ख्याति दिलवाई । 'साकेत', 'झंकार', 'जयभारत', 'विष्णुप्रिया' आदि इनकी अन्य रचनाएँ हैं । इन्होंने लगभग चालीस पुस्तकों की रचना की । खड़ी बोली हिंदी में वे सर्वाधिक प्रबंध काव्य लिखनेवालों में से हैं ।

मैथिलीशरण गुप्त विचारों से गाँधीवादी, मन-मिजाज से शुद्ध वैष्णव और कविताई की दृष्टि से अभिधावादी हैं । हिंदी कविता को गुप्त जी की अनेक देन हैं । आज जो काव्यभाषा हमें प्राप्त है उसे निखारने, माँजने और सँवारने में गुप्त जी का प्रमुख योगदान है । खड़ी बोली को काव्य प्रयोग के अर्थ में ही नहीं, जनरुचि की काव्यभाषा के रूप में विकसित करने में भी गुप्त जी की केंद्रीय भूमिका रही है । यह एक ज्ञात तथ्य है कि हिंदी पट्टी की कई-कई पीढ़ियाँ गुप्तजी की काव्य पंक्तियों को दुहराते हुए बड़ी हुई हैं । यह उनकी काव्यभाषा की सामर्थ्य और शक्ति का उदाहरण है ।

गुप्त जी वैष्णव हैं पर उनमें संकीर्णता नहीं है । राम उनके आराध्य हैं और उनका 'साकेत' मानस के पश्चात हिंदी का सबसे महत्त्वपूर्ण रामकाव्य । राम, सीता, उर्मिला, भरत, कैकेयी, हिडिंबा, नहुष, आदि पात्र गुप्तजी का पुनस्स्पर्श पाकर नवीन चेतना से युक्त दिखाई पड़ते हैं । गुप्तजी सच्चे अर्थों में जनकवि हैं ।

निश्चित रूप से गुप्त जी के काव्य में अतीत को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । विजयेंद्र स्नातक के अनुसार, "उनके काव्य में जो नया है उसका मेरुदंड पुराना है और जो पुराना है उस पर नए भावबोध का रंग पूरी तरह चढ़ा हुआ है । सांस्कृतिक पुनरुत्थान के लिए इसी समन्वित जीवन दृष्टि की अपेक्षा होती है । यह समन्वित दृष्टि उनके पौराणिक पात्रों के चरित्र-चित्रण में सर्वत्र व्याप्त है ।"

गुप्त जी की प्रायः कविताएँ तुकांत हैं । उन्होंने गीत भी लिखें हैं । हरिगीतिका उनका प्रिय और बहुप्रयुक्त छंद है । उनकी रचनाओं में तुकांत का प्रयोग कई जगहों पर अखरने वाला भी है । आगे चलकर उन्होंने अतुकांत रचनाएँ भी कीं । यों गुप्त जी छायावाद और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी लिखते रहे, किंतु प्रमुख काव्योपलब्धियों के आधार पर उनकी गणना द्विवेदीयुगीन कवि के रूप में ही की जाती है । वे हिंदी के प्रथम राष्ट्रकवि के रूप में समादृत हैं ।

अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865-1947)

हरिऔध का जन्म उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जिले के निजामाबाद में हुआ था । खड़ी बोली को काव्यभाषा का पद प्रदान करने वाले कवियों में अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' अग्रगण्य हैं । इन्होंने अपने कवि-कर्म का आरंभ ब्रजभाषा से किया था । द्विवेदीजी के प्रभाव से ये खड़ी बोली की ओर उन्मुख हुए । इन्होंने आरंभ में 'प्रद्युम्न विजय' तथा 'रुक्मिणी परिणय' नामक नाटक तथा 'प्रेमकांता', 'ठेठ हिंदी का ठाट', 'अधखिला फूल' नाम के उपन्यास लिखे । पर इनकी प्रतिभा का सम्यक परिचय कविता से ही प्राप्त होता है । 'रसकलश' इनका ब्रजभाषा काव्य संग्रह है । 'रसिक रहस्य', 'प्रेमप्रपंच', 'कर्मवीर', 'चोखे

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

चौपदे', 'वैदेही वनवास', 'चुभते चौपदे' आदि इनकी कृतियाँ हैं। इनका 'प्रिय प्रवास' (1914) खड़ी बोली हिंदी का प्रथम महाकाव्य कहा जाता है। प्रियप्रवास में कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात ब्रजवासियों की विरह-व्यथा का वर्णन है। इस कृति में कृष्ण कथा को आधुनिक और समयानुरूप कलेवर प्रदान करते हुए नायक श्रीकृष्ण और नायिका राधा को विश्वकल्याण की भावना से परिपूर्ण शुद्ध मानव-रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रियप्रवास की प्रसिद्धि का एक अन्य कारण उसकी संस्कृतनिष्ठ शब्दावली एवं वार्णिक वृत्तों का प्रयोग भी है। हरिऔध जी ने खड़ी बोली में कोमलता और माधुर्य का संचार किया, प्रियप्रवास में ही ऐसे कई उदाहरण हैं। उनके चुभते चौपदे, चोखे-चौपदे की भाषा पर्याप्त मुहावरेदार और खड़ी बोली का सहज रूप लिए हुए है।

श्रीधर पाठक (1859-1928)

इनका जन्म आगरा के जोंधरी नामक ग्राम में हुआ था। श्रीधर पाठक ने मौलिक काव्य रचना के साथ-साथ अनुवाद कार्य भी किया। गोल्डस्मिथ के 'हरमिट' का 'एकांतवासी योगी', और 'ट्रैवेलर' का 'श्रांत पथिक' नाम से खड़ी बोली में अनुवाद किया। इनकी मौलिक कृतियों में 'जगतसचाई सार', 'कश्मीर सुषमा', 'भारतगीत' आदि हैं।

अपने समकालीनों में प्रकृति का सबसे जीवंत, मनोरम और स्वच्छंदतावादी चित्रण करनेवालों में श्रीधर पाठक प्रमुख हैं। छायावादी कविताओं का श्रीधर पाठक के काव्य से सहज संबंध है। इनकी रचनाओं में समाज सुधार और स्वदेश प्रेम की भी भावना प्रमुखता से मिलती है। यह सच है कि श्रीधर पाठक की ब्रज रचनाएँ ज्यादा सशक्त हैं पर खड़ी बोली में काव्यारंभ करने वाले वे आरंभिक कवियों में हैं।

रामनरेश त्रिपाठी (1881-1962)

रामनरेश त्रिपाठी का जन्म जौनपुर में हुआ था। श्रीधर पाठक यदि हिंदी में स्वच्छंदतावाद के जनक हैं तो रामनरेश त्रिपाठी ने अपनी रचनाओं से इसे विकसित एवं संपन्न किया। देशप्रेम, राष्ट्रीयता की उत्कट पुकार और प्रकृति चित्रण इनकी रचनाओं में प्रमुखता से दिखाई पड़ते हैं।

त्रिपाठी जी ने भी रचनाकर्म की शुरुआत ब्रजभाषा से की थी, पर शीघ्र ही खड़ी बोली की ओर मुड़ गए। 'मिलन', 'पथिक', 'मानसी' और 'स्वप्न' इनकी काव्य पुस्तकें हैं। 'मिलन', 'पथिक' तथा 'स्वप्न' प्रेमाधारित खंड काव्य हैं पर यह प्रेम राष्ट्रप्रेम के रूप में सार्थक परिणति प्राप्त करता है।

रामनरेश त्रिपाठी की काव्यभाषा शुद्ध और सहज खड़ी बोली है। उस समय में भाषा का यह रूप अन्य कवियों में नहीं मिलता। हिंदी साहित्य के इतिहास में त्रिपाठी जी 'कविता कौमुदी' के संपादन-संकलन के लिए भी स्तुत्य हैं। 'कविता कौमुदी' उनके अथक परिश्रम, गहरी संवेदनशीलता और संपादन की उत्कृष्ट उपलब्धि है। यह हिंदी, उर्दू, बाँग्ला और संस्कृत की लोकप्रिय कविताओं का संकलन है। ग्राम गीतों के संकलन, संपादन और उनका हार्दिक भाष्य प्रस्तुत करने वाले वे पहले हिंदीसेवी हैं।

द्विवेदी युग के अन्य कवियों में नाथूराम शर्मा 'शंकर', गया प्रसाद शुक्ल 'सनेही', रूपनारायण पांडेय, लोचन प्रसाद पांडेय, मुकुटधर पांडेय, गोपालशरण सिंह आदि उल्लेखनीय हैं।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

का जो अभाव दिखता है बालमुकुंद गुप्त उसकी पूर्ति करते हैं । इनका जन्म हरियाणा के रोहतक जिले में गुड़ियाना ग्राम में हुआ था । 'शिवशंभू के चिट्ठे' तथा 'चिट्ठे और खत' इनकी कृतियाँ हैं । 'शिवशंभू के चिट्ठे' शिवशंभू शर्मा के कल्पित नाम से जब लिखते थे तब ये 'भारतमित्र' पत्र के संपादक थे । इनमें लार्ड कर्जन की निरंकुश और मनमानी नीतियों पर व्यंग्य है ।

निबंध द्विवेदी युग की महत्त्वपूर्ण विधा है । आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, गुलेरी जी आदि की निबंध कला का वैभव ही हमें आचार्य रामचंद्र शुक्ल में दिखाई पड़ता है ।

उपन्यास

हिंदी में उपन्यास लेखन की शुरुआत भारतेंदु युग में ही हो जाती है। भारतेंदु युग की विवेचना के प्रसंग में हिंदी के आरंभिक उपन्यासों तथा जासूसी-ऐयारी उपन्यासों विशेषकर देवकीनंदन खत्री, गोपाल राम गहमरी आदि के उपन्यासों का उल्लेख किया जा चुका है। इस काल में भी ये रचनाकार सक्रिय रहे, किंतु इनके उपन्यासों की विषय-वस्तु में विशेष अंतर नहीं दिखाई पड़ता । इस युग में किशोरी लाल गोस्वामी, गंगा प्रसाद गुप्त, मथुरा प्रसाद शर्मा आदि ने ऐतिहासिक उपन्यास लिखे । 'रामलाल' के लेखक मन्नन द्विवेदी गजपुर और 'लालचीन', 'सौंदर्योपासक' आदि स्वच्छंद शैली के उपन्यासों के लेखक बिहारवासी ब्रजनंदन सहाय 'ब्रजवल्लभ' आदि इस युग के महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं ।

इस काल में उपन्यास लेखन की कोई विशिष्ट और उल्लेखनीय पहचान नहीं उभर पाती । उर्दू में यद्यपि प्रेमचंद रचनात्मक संघर्ष और लेखकीय विकास कर रहे थे, पर हिंदी पाठकों से उनका सम्यक परिचय न हो पाया था । उनका 'बाजार-ए-हुस्न' 'सेवासदन' के रूप में 1918 में हिंदी में प्रकाशित हुआ था ।

कहानी

हिंदी में कहानी लेखन की ठोस शुरुआत द्विवेदी युग से ही होती है । पुराने तरह के उपन्यासों या कहानियों से आधुनिक उपन्यासों या कहानियों का अंतर बताते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है – "वे (उपन्यास या कहानी) कथा के भीतर की कोई भी परिस्थिति आरंभ में रखकर चल सकते हैं और उसमें घटनाओं की श्रृंखला लगातार सीधी न जाकर इधर-उधर और श्रृंखलाओं से गुंफित होती चलती है और अंत में जाकर सबका समाहार हो जाता है । घटनाओं के विन्यास की यह वक्रता या वैचित्र्य उपन्यासों और आधुनिक कहानियों की वह प्रत्यक्ष विशेषता है जो उन्हें पुराने ढंग की कथा कहानियों से अलग करती है ।"

हिंदी की आरंभिक कहानियों पर अंग्रेजी या बाँग्ला की कहानियों का प्रभाव पड़ा । ये या तो अनूदित थीं या उनसे प्रभावित होकर लिखी गईं । बहरहाल, हिंदी की कुछ आरंभिक कहानियों की सूची नीचे दी जा रही है –

कहानियाँ	प्रकाशन वर्ष	लेखक
इंदुमती	1900	किशोरीलाल गोस्वामी
एक टोकरी भर मिट्टी	1900	माधवराव सप्रे

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

विश्वास का फल	1901	माधव प्रसाद मिश्र
प्लेग की चुड़ैल	1902	मास्टर भगवानदास
गुल बहार	1902	किशोरी लाल गोस्वामी
ग्यारह वर्ष का समय	1903	रामचंद्र शुक्ल
पंडितजी और पंडितानी	1903	गिरिजादत्त वाजपेयी
एक शिकारी की सच्ची कहानी	1905	निजाम शाह
कुंभ में छोटी बहू	1906	बंग महिला
दुलाई वाली	1907	बंग महिला
राखीबंद भाई	1909	वृंदावनलाल वर्मा
ग्राम	1911	जयशंकर प्रसाद
सुखमय जीवन	1911	चंद्रधर शर्मा गुलेरी

इसी युग में प्रकाशित चंद्रधर शर्मा गुलेरी की कहानी 'उसने कहा था' (सरस्वती, 1915) हिंदी की सार्वकालिक चर्चित कहानियों में से एक है। प्रेमचंद ने उर्दू के साथ-साथ हिंदी में भी लिखना शुरू किया। उनकी पहली हिंदी कहानी 'सौत' 1915 में प्रकाशित हुई। इसी तरह राजा राधिकारमण सिंह की 'कानों में कंगना', विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबंधन' आदि इस दौर की चर्चित कहानियाँ हैं। कुल मिलाकर हिंदी में कहानी विधा ने स्वयं को इस काल में स्थापित कर लिया। कहानी धीरे-धीरे विषय और शिल्प दोनों ही कसौटियों पर अधिक निखरती गई।

आलोचना

इस युग में आलोचना की कई पद्धतियाँ दिखाई पड़ती हैं, जैसे – काव्यांग विवेचन, तुलनात्मक आलोचना, अनुसंधानात्मक आलोचना, परिचयात्मक आलोचना तथा व्याख्यात्मक आलोचना। हिंदी आलोचना इस काल में मुख्यतः रीतिवादी प्रवृत्तियों और आधुनिक प्रवृत्तियों की टकराहट के बीच अपना विकास कर रही थी। रीतिवादी आलोचना का कार्य काव्यांग विवेचन या रीतिकालीन कवियों के व्याख्या-विश्लेषण तक सीमित था। रीतिकालीन कवियों–देव और बिहारी में श्रेष्ठता को लेकर भी विवाद चला। इस काल में गंभीर और शोधपरक आलोचना को विकसित करने में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' और 'समालोचक' पत्रों का विशेष योगदान रहा। लाला भगवानदीन, कृष्ण बिहारी मिश्र, पद्मसिंह शर्मा ने तुलनात्मक आलोचना को बढ़ावा दिया तो मिश्रबंधु, श्यामसुंदर दास, राधाकृष्णदास आदि ने शोधपरक आलोचना का विकास किया। स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' में पुस्तकों की समीक्षाएँ लिखीं। आचार्य द्विवेदी ने अपने विचारों से सत्साहित्य की पहचान और काव्याभिरुचि के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। हम पूर्व में जान चुके हैं कि आचार्य द्विवेदी ने रीतिवादी साहित्य का जमकर विरोध किया। वे साहित्य और समाज में अविभाज्य संबंध देखते थे, उनके अनुसार "जिस जाति विशेष में साहित्य का अभाव या उसकी न्यूनता आपको दिख पड़े, आप यह निस्संदेह निश्चित समझिए कि वह जाति असभ्य किंवा अपूर्ण सभ्य है। जिस जाति की सामाजिक अवस्था जैसी होती है उसका साहित्य भी ठीक वैसा ही होता है।" इसी के साथ वे साहित्य की भूमिका रेखांकित करते हुए कहते हैं "साहित्य में जो शक्ति छिपी रहती है वह तोप, तलवार

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

गद्य साहित्य

हम जानते हैं कि खड़ी बोली में गद्य साहित्य का आरंभ भारतेंदु युग में ही हो गया था । धीरे-धीरे छापेखाने और प्रकाशन व्यवसाय का भी विकास होता गया । हिंदी अब कचहरी में प्रवेश पा चुकी थी और देश में एक नया शिक्षित मध्यवर्ग विकसित हो रहा था । हिंदी में अनुवाद कार्य भी हो रहा था । ऐसे में अंग्रेजी, मराठी, बाँग्ला आदि भाषाओं का भी हिंदी पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था । इस समय आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' का संपादन सँभाला । उन्होंने सरस्वती के माध्यम से हिंदी भाषा के मौलिक रूप को दृढ़ किया और उसे एक सुगठित व्यवस्था प्रदान की । इस तरह उन्होंने ऐतिहासिक आवश्यकता की पूर्ति की । यह व्यवस्था गद्य और पद्य दोनों में दिखाई पड़ती है ।

हिंदी नवजागरण का यह काल जिसका नेतृत्व आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी कर रहे थे, अपनी वैचारिकता, इतिवृत्तात्मकता, राष्ट्रीयता और स्वदेशी चरित्र के लिए ख्यात है । आचार्य द्विवेदी साहित्य को 'ज्ञान राशि का संचित कोश' मानते थे । इसी से इस काल के साहित्य में भावोद्‌गारों से अधिक महत्त्व जीवन-यथार्थ की अभिव्यक्ति को प्राप्त है । इस काल में गद्य के क्षेत्र में भारतेंदुयुगीन गद्य विधाओं का विकास तो हुआ ही साथ ही नई विधाओं यथा – आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र आदि का भी जन्म हुआ ।

नाटक

नाटक भारतेंदु युग की केंद्रीय विधा थी । द्विवेदी युग में इसे उतना महत्त्व नहीं मिल सका । रचनाएँ तो हुईं पर वे विशेष उल्लेखनीय नहीं हैं । कई विद्वान पारसी थियेटर की प्रभावी भूमिका को इसका महत्त्वपूर्ण कारण मानते हैं ।

अंग्रेजी के नाटकों 'रोमियो जूलियट', 'मैकबेथ', 'हैमलेट', 'एज यू लाइक इट'; संस्कृत के 'मृच्छकटिकम', 'नागानंद', 'उत्तररामचरित'; बाँग्ला के 'पतिव्रता', 'खानजहाँ', 'शाहजहाँ' आदि कई नाटकों के अनुवाद हुए ।

मौलिक नाटकों में किशोरी लाल गोस्वामी का 'चौपटचपेट' और 'मयंक मंजरी', शिवनंदन सहाय का 'सुदामानाटक', देवीप्रसाद पूर्ण का 'चंद्रकलाभानुकुमार' आदि हैं ।

निबंध

निबंध द्विवेदी युग की प्रमुख विधा है । यह सही है कि द्विवेदीयुगीन निबंधों में भारतेंदु युग सी जीवंतता, स्फूर्ति और हँसमुखपन नहीं है पर वैचारिक स्पष्टता एवं दृढ़ता, विषयों की विविधता, समकालीन से प्रत्यक्ष और गहरा संवाद, अकृत्रिमता और अपने सरोकारों से सच्चा जुड़ाव इन निबंधों में सहज ही महसूसा जा सकता है । भाषाई दृष्टि से आवश्यक अनुशासन, सुगठित वाक्य-संरचना आदि इस युग के निबंधों की पहचान है । इस युग के निबंधों की विवेचना करते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लिखा है – "यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है तो निबंध गद्य की कसौटी है । भाषा की पूर्ण शक्ति का विकास निबंधों में ही सबसे अधिक संभव होता है ।" उनके अनुसार "निबंध लेखक जिधर चलता है उधर अपनी संपूर्ण मानसिक सत्ता के साथ अर्थात बुद्धि और भावात्मक हृदय दोनों लिए हुए ।"

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

निबंध विधा की विशेषता बताते हुए वे लिखते हैं : "संसार की हर बात और सब बातों से संबद्ध है। अपने मानसिक संघटन के अनुसार किसी का मन किसी संबंधसूत्र पर दौड़ता है किसी का किसी पर। ये संबंधसूत्र एक दूसरे के नथे हुए पत्तों के भीतर ही नसों के समान चारों ओर एक जाल के रूप में फैले हैं।........ निबंध लेखक अपने मन की प्रवृत्ति के अनुसार स्वच्छंद गति से इधर-उधर फूटी हुई सूत्र शाखाओं पर विचरता चलता है। यही उसकी अर्थ संबंधी व्यक्तिगत विशेषता है। ....एक ही बात को लेकर किसी का मन किसी संबंधसूत्र पर दौड़ता है, किसी का किसी पर। इसी का नाम है एक ही बात को भिन्न-भिन्न दृष्टियों से देखना।"

इस युग के प्रमुख निबंधकारों में महावीर प्रसाद द्विवेदी, माधव प्रसाद मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, श्यामसुंदर दास, चंद्रधर शर्मा गुलेरी, अध्यापक पूर्ण सिंह, पदुमलाल पन्नालाल बख्शी, पद्मसिंह शर्मा आदि हैं। आचार्य शुक्ल के निबंध लेखन की शुरुआत भी इसी काल में हुई थी पर वे निबंध के आगामी विकास के प्रतिनिधि हैं।

प्रमुख निबंधकार

महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864-1938)

इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं। द्विवेदी जी के निबंधों में 'विचार' प्रमुख है। वे सामान्यतः व्यास शैली के निबंधकार हैं। 'क्या हिंदी नाम की कोई भाषा ही नहीं', 'आर्य समाज का कोप' आदि उनके प्रमुख निबंध हैं। 'बातों के संग्रह' उनके निबंधों की पुस्तक है। उनके निबंधों में यत्र-तत्र व्यक्तिव्यंजक तत्त्व एवं व्यंग्य का स्पर्श भी दिख जाता है।

अध्यापक पूर्ण सिंह (1881-1931)

ये इस काल के सर्वश्रेष्ठ आत्मव्यंजक निबंधकार हैं। इनके निबंधों में भावना का आवेग, कल्पना की उड़ान और स्वच्छंदतावादी प्रवृत्तियाँ दिखती हैं। द्विवेदीयुगीन निबंधों की सामान्य पहचान से अलग इनके निबंधों में मानवीय मूल्यों, आध्यात्मिकता की व्यापक किंतु सूक्ष्म और गहन प्रवृत्ति से परिचय होता है। शैलीगत दृष्टि से व्यक्तित्व का प्रवाह, चित्रात्मकता, लाक्षणिक शैली इनके निबंधों की पहचान है। 'आचरण की सभ्यता', 'मजदूरी और प्रेम', 'सच्ची वीरता', 'पवित्रता', 'कन्यादान' आदि इनके निबंध हैं।

चंद्रधर शर्मा गुलेरी (1883-1922)

ये इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं। 'पृथ्वीराज विजय महाकाव्य', 'पुरानी हिंदी', 'जयसिंह काव्य', 'कछुआ धर्म', 'मारेसि मोहि कुठावँ' आदि इनके प्रसिद्ध निबंध हैं। इनके निबंधों में 'अगाध पांडित्य और आधुनिकता का अद्भुत समन्वय' मिलता है। गूढ़ शास्त्रीय तथा सामान्य कोटि के विषयों पर इनका एक समान अधिकार है। इनके निबंधों में हास्य-व्यंग्य और प्रसंगानुरूप अर्थवत्ता भी है। भाषाशास्त्रीय विषयों से जुड़े इनके निबंध भी पर्याप्त रोचक और पठनीय हैं।

बालमुकुंद गुप्त (1865-1907)

द्विवेदी युग में भारतेंदुयुगीन निबंधों सी व्यक्तिव्यंजकता, आत्मीयता, व्यंग्य-विनोद और भाव-प्रवाह

Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

और बम के गोलों में भी नहीं पाई जाती ।"

तात्पर्य यह है कि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी एक आलोचनात्मक विवेक उत्पन्न कर रहे थे जिसकी स्पष्ट पहचान परवर्ती हिंदी आलोचना में की जा सकती है । द्विवेदी जी की इस भूमिका का महत्त्व इससे स्पष्ट हो जाता है कि आगे चलकर हिंदी आलोचना के केंद्र में रीतिकाल नहीं बल्कि भक्तिकाल आ जाता है । डॉ० रामविलास शर्मा ने उचित ही लिखा है "द्विवेदी जी का गद्य साहित्य आधुनिक हिंदी साहित्य का ज्ञान कांड है ।"

द्विवेदी युगीन कुछ प्रमुख पत्र-पत्रिकाएँ

पत्र-पत्रिका	वर्ष	स्थान
1. सरस्वती (मासिक)	1900	इलाहाबाद
2. सुदर्शन (मासिक)	1900	काशी
3. समालोचक (मासिक)	1902	जयपुर
4. अभ्युदय (साप्ताहिक)	1907	प्रयाग
5. कर्मयोगी (साप्ताहिक)	1909	प्रयाग
6. इंदु (मासिक)	1909	काशी
7. प्रताप (साप्ताहिक)	1913	कानपुर
8. पाटलिपुत्र (मासिक)	1914	पटना

भारतेंदु युग और द्विवेदी युग में बिहारी साहित्यकारों को आदरणीय स्थान प्राप्त था । कुछ कवियों के कार्य को युगांतरकारी भी माना गया है । चंपारण के चंद्रशेखर मिश्र और संथाल परगना के महेश नारायण के नाम इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं । आचार्य शुक्ल ने अपने 'हिंदी साहित्य का इतिहास' में लिखा है – "चंपारण के प्रसिद्ध विद्वान और वैद्य पं० चंद्रशेखर मिश्र, जो भारतेंदु जी के मित्रों में थे, संस्कृत के अतिरिक्त हिंदी में भी बड़ी सुंदर और आशु कविता करते थे । मैं समझता हूँ कि हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में संस्कृत वृत्तों में खड़ी बोली के कुछ पद्य पहले पहल मिश्र जी ने ही लिखे ।" इसी तरह महेश नारायण ने उस समय खड़ी बोली को काव्य रचना के लिए सप्रमाण सक्षम घोषित किया, जब भारतेंदु जैसे कृतिकार भी उसकी असमर्थता की बात कर रहे थे । मुक्त छंद की दिशा में भी इन्होंने अच्छे प्रयोग किए हैं । मुक्त छंद खड़ी बोली में रचित महेशनारायण की एक कविता उदाहरणस्वरूप देखी जा सकती है –

एक कुंज
बहुत गुंज
पेड़ों से घिरा था
झरने की बगल में
बिजली की चमक
न पहुँची थी वहाँ तक ।
ऐसा वह घिरा था
उस दीप को जल में

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...

पानी की टपक
राह भला पाने कहाँ तक ।

छात्रसखा (पृ०-11, 12)

इस कालखंड के बिहारी गद्यकारों ने अपनी विविध-विषयक रचनाओं के माध्यम से खड़ी बोली गद्य के स्वरूप को सँवारने का प्रयास किया है । इनमें अक्षयवट मिश्र 'विप्रचंद', गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, चंद्रशेखरधर मिश्र, जगदीश झा विमल, जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, प्रमोदशरण पाठक, भवानीदयाल संन्यासी, यशोदानंदन सहाय, शिवपूजन सहाय, सकलनारायण शर्मा, जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी आदि उल्लेखनीय हैं । इन लोगों ने अपनी सशक्त गद्य रचना के माध्यम से खड़ी बोली गद्य को एक नया मोड़ दिया है ।

कथा साहित्य के क्षेत्र में अनूपलाल मंडल, अवधनारायण, ईश्वरीप्रसाद शर्मा, कमलदेव नारायण, गंगा प्रसाद श्रीवास्तव, जगदीश झा 'विमल', जनार्दन झा 'जनसीदन', जैनेन्द्र किशोर 'जैन', पारसनाथ सिंह, ब्रजनंदन सहाय 'ब्रजवल्लभ', श्रीकृष्ण मिश्र, साधुशरण, हरदीपनारायण सिंह 'दीप', हरिहर प्रसाद 'जिंगल', कार्तिकेयचरण मुखोपाध्याय तथा चंद्रशेखर पाठक के योगदान अविस्मरणीय हैं । अवधनारायण को अपने उपन्यास 'विमाता' के कारण देशव्यापी ख्याति मिली । जैनेन्द्र किशोर 'जैन' ने उस समय मौलिक उपन्यासों की रचना की, जब हिंदी में उसकी संख्या बहुत कम थी । मिश्रबंधुओं ने इन्हें 'नामी उपन्यास लेखक' बतलाया है । 'कमलिनी', 'मनोरमा', 'परख' आदि इनकी रचनाएँ हैं । पारसनाथ सिंह के 'जगतसेठ' ने भी प्रसिद्धि पाई । ब्रजनंदन सहाय 'ब्रजवल्लभ' हिंदी के आरंभिक मौलिक उपन्यासकारों में थे ।

राजाराधिका रमण प्रसाद सिंह ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से हिंदी को नई शैली दी । इनके साथ पंडित चंद्रशेखर पाठक की गणना भी हिंदी के यशस्वी उपन्यासकारों में की गई ।

इस काल में मैथिली और अँगिका के भक्त कवि भवप्रीतानंद ओझा ने अपने झूमरों के कारण पर्याप्त लोकप्रियता अर्जित की । भोजपुरी के भिखारी ठाकुर वास्तविक जनकवि के रूप में उभरे । उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार के पश्चिमी जिलों में पर्याप्त प्रसिद्धि पाई। भोजपुरी के रचनाकार रघुवीर नारायण का 'बटोहिया' गीत भारत की सीमा पारकर दक्षिण अफ्रीका, मॉरिशस तथा त्रिनिदाद के प्रवासी भारतीयों में भी लोकप्रिय हुआ । उनकी 'भारत भवानी' भी काफी लोकप्रिय हुई । बहुत कुछ वैसी ही प्रसिद्धि मनोरंजन प्रसाद सिंह के 'फिरंगिया' गीत को भी मिली । कहा जाता है कि महात्मा गाँधी अपनी सभाओं में पहले उसी गीत को सुनना चाहते थे । पं० रामसकल पाठक 'द्विजराज' के 'विधवा विलाप' की पंक्तियाँ 'विदेशिया' नाम से लोककंठ में छा गईं ।

कुल मिलाकर भारतेंदु और द्विवेदीयुगीन हिंदी साहित्य में बिहारी साहित्यकारों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा । पत्रकारिता और भाषा प्रचारादि में भी इन रचनाकारों का महत्त्व असंदिग्ध है । पत्रकारिता के क्षेत्र में केशवराम भट्ट (बिहार बंधु) ईश्वरीप्रसाद शर्मा, गया प्रसाद 'मणिक' आदि के योगदान अविस्मरणीय हैं । नागरी का आंदोलन एवं खड़ी बोली को काव्यभाषा के रूप में प्रतिष्ठित कराने में अयोध्या प्रसाद खत्री ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

© Copy right received only to BSTBPC, Govt of Bihar and Abdiel Solutions (www.absol.in). Publishing (web/App/Books) will be crime
Abdiel Solutions
Empowering Technologies...